Chapter पन्द्रह

भगवान् का योद्धा अवतार, परशुराम

इस अध्याय में ऐल के वंशज गाधि की कथा का वर्णन हुआ है।

उर्वशी के गर्भ से छः पुत्र उत्पन्न हुए जिनके नाम थे आयु, श्रुतायु, सत्यायु, रय, जय तथा विजय। श्रुतायु का पुत्र वसुमान था, सत्यायु का पुत्र श्रुतञ्जय हुआ, रय के पुत्र का नाम एक था, जय का पुत्र अमित था और विजय का पुत्र भीम हुआ। भीम के पुत्र का नाम कांचन था, उसके पुत्र का नाम होत्रक तथा होत्रक के पुत्र का नाम जह्नु था जो एक ही घूँट में गंगा का सारा पानी पी लेने के लिए विख्यात था। जह्नु के वंशजों के नाम क्रमशः पुरु, बलाक, अजक तथा कुश थे। कुश के पुत्रों के नाम थे कुशाम्बु, तनय, वसु तथा कुशनाभ। कुशाम्बु का पुत्र गाधि हुआ जिसके सत्यवती नाम की एक कन्या हुई। सत्यवती ने ऋचीक मुनि के साथ विवाह किया जब मुनि ने प्रचुर दहेज दिया और उन दोनों से जमदग्नि नामक पुत्र की उत्पत्ति हुई। जमदग्नि का पुत्र राम या परशुराम था। जब कार्तवीर्यार्जुन नामक राजा ने जमदग्नि की कामधेनु चुरा ली तो भगवान् के शक्त्यावेश अवतार परशुराम ने उसका वध किया। बाद में परशुराम ने इक्कीस बार क्षत्रिय वंश का संहार किया। जब परशुराम ने कार्तवीर्यार्जुन का वध कर दिया तो जमदग्नि ने उसे बताया कि राजा का वध पापपूर्ण होता है और उसे ब्राह्मण होने के नाते इस अपराध को सह लेना चाहिए था। अतएव जमदग्नि ने परशुराम को अपने पापों का प्रायश्चित्त करने के लिए विविध तीर्थस्थानों की यात्रा करने की सलाह दी।

श्रीबादरायणिरुवाच
ऐलस्य चोर्वशीगर्भात्षडासन्नात्मजा नृप ।
आयुः श्रुतायुः सत्यायू रयोऽथ विजयो जयः ॥ १ ॥

शब्दार्थ

श्री-बादरायणिः उवाच—श्रील शुकेदव गोस्वामी ने कहा; ऐलस्य—पुरुरवा के; च—भी; उर्वशी-गर्भात्—उर्वशी के गर्भ से; षट्—छः; आसन्—थे; आत्मजाः—पुत्र; नृप—हे राजा परीक्षित; आयुः—आयु; श्रुतायुः—श्रुतायु; सत्यायुः—सत्यायु; रयः—रय; अथ—तथा; विजयः—विजय; जयः—जय।

शुकदेव गोस्वामी ने आगे कहा : हे राजा परीक्षित, पुरुरवा ने उर्वशी के गर्भ से छः पुत्र उत्पन्न किये। उनके नाम थे—आयु, श्रुतायु, सत्यायु, रय, विजय तथा जय।

श्रुतायोर्वसुमान्पुत्रः सत्यायोश्च श्रुतञ्जयः ।
रयस्य सुत एकश्च जयस्य तनयोऽमितः ॥ २ ॥
भीमस्तु विजयस्याथ काञ्चनो होत्रकस्ततः ।
तस्य जह्नुः सुतो गङ्गां गण्डूषीकृत्य योऽपिबत् ॥ ३ ॥

शब्दार्थ

श्रुतायोः—श्रुतायु का; वसुमान्—वसुमान; पुत्रः—पुत्र; सत्यायोः—सत्यायु का; च—भी; श्रुतञ्जयः—श्रुतञ्जय; रयस्य—रय का; सुतः—पुत्र; एकः—एक नामक; च—तथा; जयस्य—जय का; तनयः—पुत्र; अमितः—अमित; भीमः—भीम; तु—निस्सन्देह; विजयस्य—विजय का; अथ—तत्पश्चात्; काञ्चनः—काञ्चन, भीम का पुत्र; होत्रकः—होत्रक; ततः—तब; तस्य—होत्रक का; जह्नुः—जह्नु; सुतः—पुत्र; गङ्गाम्—गंगा के सारे जल को; गण्डूषी-कृत्य—एक ही घूँट में; यः—जिसने; अपिबत्—पी लिया।

श्रुतायु का पुत्र वसुमान हुआ, सत्यायु का पुत्र श्रुतञ्जय हुआ, रय के पुत्र का नाम एक था, जय का पुत्र अमित था और विजय का पुत्र भीम हुआ। भीम का पुत्र काञ्चन, काञ्चन का पुत्र होत्रक और होत्रक का पुत्र जह्नु था जिसने एक ही घूँट में गंगा का सारा पानी पी लिया था।

जह्नोस्तु पुरुस्तस्याथ बलाकश्चात्मजोऽजकः ।
ततः कुशः कुशस्यापि कुशाम्बुस्तनयो वसुः ।
कुशनाभश्च चत्वारो गाधिरासीत्कुशाम्बुजः ॥ ४ ॥

शब्दार्थ

जह्नोः—जह्नु का; तु—निस्सन्देह; पुरुः—पुरु नामक; तस्य—उसका; अथ—तत्पश्चात्; बलाकः—बलाक; च—तथा; आत्मजः—बलाक का पुत्र; अजकः—अजक; ततः—तत्पश्चात्; कुशः—कुश; कुशस्य—कुश का; अपि—तब; कुशाम्बुः—कुशाम्बु; तनयः—तनय; वसुः—वसु; कुशनाभः—कुशनाभ; च—तथा; चत्वारः—चार पुत्र; गाधिः—गाधि; आसीत्—था; कुशाम्बुजः—कुशाम्बुज का पुत्र।

जह्नु का पुत्र पुरु था, पुरु का बलाक, बलाक का अजक और अजक का पुत्र कुश हुआ। कुश के चार पुत्र हुए जिनके नाम थे कुशाम्बुज, तनय, वसु तथा कुशनाभ। कुशाम्बु का पुत्र गाधि था।

तस्य सत्यवतीं कन्यामृचीकोऽयाचत द्विजः ।
वरं विसदृशं मत्वा गाधिर्भार्गवमब्रवीत् ॥ ५ ॥
एकतः श्यामकर्णानां हयानां चन्द्रवर्चसाम् ।
सहस्रं दीयतां शुल्कं कन्यायाः कुशिका वयम् ॥ ६ ॥

शब्दार्थ

तस्य—उस (गाधि) की; सत्यवतीम्—सत्यवती; कन्याम्—पुत्री को; ऋचीकः—महामुनि ऋचीक ने; अयाचत—विवाह के लिए माँगा; द्विजः—ब्राह्मण; वरम्—पति रूप में; विसदृशम्—अनुपयुक्त; मत्वा—मानकर; गाधिः—राजा गाधि; भार्गवम्—ऋचीक से; अब्रवीत्—बोला; एकतः—एक; श्याम-कर्णानाम्—जिसका कान काला हो; हयानाम्—घोड़ों का; चन्द्र-वर्चसाम्—चाँदनी सा उज्ज्वल; सहस्रम्—एक हजार; दीयताम्—दें; शुल्कम्—दहेज के रूप में; कन्यायाः—मेरी कन्या को; कुशिकाः—कुश के परिवार में; वयम्—हम हैं।

गाधि के एक पुत्री थी जिसका नाम सत्यवती था जिससे विवाह करने के लिए ऋचीक नामक

ब्रह्मर्षि ने राजा से विनती की। किन्तु राजा गाधि ने इस ब्रह्मर्षि को अपनी पुत्री के लिए अयोग्य पति समझ कर उससे कहा, ''महोदय, मैं कुशवंशी हूँ। चूँकि हम लोग राजसी क्षत्रिय हैं अतएव आपको मेरी पुत्री के लिए कुछ दहेज देना होगा। अतः आप कम से कम एक हजार ऐसे घोड़े लायें जो चाँदनी की तरह उज्ज्वल हों और जिनके एक कान, दायाँ या बायाँ, काला हो।''

तात्पर्य : राजा गाधि का पुत्र विश्वामित्र हुआ जो ब्राह्मण तथा क्षत्रिय का मिश्रित रूप कहा जाता था। विश्वामित्र ने ब्रह्मर्षि का पद प्राप्त किया जैसा कि आगे बताया गया है। ऋचीक मुनि के साथ सत्यवती का विवाह होने से उनका जो पुत्र होगा वह क्षत्रिय गुणों वाला होगा। राजा गाधि ने कहा कि वह अपनी पुत्री की शादी ऋचीक ब्राह्मण से तभी कर सकता है जब उसकी एक असाधारण माँग पूरी हो जाय।

इत्युक्तस्तन्मतं ज्ञात्वा गतः स वरुणान्तिकम् ।
आनीय दत्त्वा तानश्वानुपयेमे वराननाम् ॥ ७॥

शब्दार्थ

इति—इस तरह; उक्तः—कहे जाने पर; तत्-मतम्—उसका विचार; ज्ञात्वा—जानकर; गतः—चला गया; सः—वह; वरुण-अन्तिकम्—वरुण लोक को; आनीय—लाकर; दत्त्वा—तथा देकर; तान्—उन; अश्वान्—घोड़ों को; उपयेमे—विवाह कर लिया; वर-आननाम्—राजा गाधि की सुमुखी पुत्री का।

जब राजा गाधि ने यह माँग पेश की तो महर्षि ऋचीक को राजा के मन की बात समझ में आ गई। अतएव वह वरुणदेव के पास गया और वहाँ से गाधि द्वारा माँगे गये एक हजार घोड़े ले आया। इन घोड़ों को भेंट करके मुनि ने राजा की सुन्दर पुत्री के साथ विवाह कर लिया।

स ऋषिः प्रार्थितः पत्न्या श्वश्र्वा चापत्यकाम्यया ।
श्रपयित्वोभयैर्मन्त्रैश्चरुं स्नातुं गतो मुनिः ॥ ८॥

शब्दार्थ

सः—वह (ऋचीक); ऋषिः—ऋषि; प्रार्थितः—प्रार्थना किये जाने पर; पत्न्या—अपनी पत्नी द्वारा; श्वश्र्वा—अपनी सास द्वारा; च—भी; अपत्य-काम्यया—पुत्र की इच्छा से; श्रपयित्वा—पकाकर; उभयैः—दोनों; मन्त्रैः—विशेष मंत्रोच्चार से; चरुम्—यज्ञ में आहुति देने के लिए खीर; स्नातुम्—स्नान करने के लिए; गतः—चला गया; मुनिः—मुनि।

तत्पश्चात् ऋचीक मुनि की पत्नी तथा सास दोनों ने पुत्र की इच्छा से मुनि से प्रार्थना की कि वह चरु (आहुति) तैयार करे। तब मुनि ने अपनी पत्नी के लिए ब्राह्मण मंत्र से एक चरु और क्षत्रिय मंत्र से अपनी सास के लिए एक अन्य चरु तैयार किया। फिर वह स्नान करने चला गया।

तावत्सत्यवती मात्रा स्वचरुं याचिता सती ।
श्रेष्ठं मत्वा तयायच्छन्मात्रे मातुरदत्स्वयम् ॥ ९ ॥

शब्दार्थ

तावत्—इसी बीच; सत्यवती—ऋचीक पत्नी सत्यवती; मात्रा—अपनी माता से; स्व-चरुम्—अपने लिए तैयार की गई चरु; याचिता—माँगे जाने पर; सती—होने से; श्रेष्ठम्—उत्तम; मत्वा—सोचकर; तया—उसके द्वारा; अयच्छत्—प्रदान किया गया; मात्रे—माता का; मातुः—माता का; अदत्—खाया; स्वयम्—स्वयं, खुद।

इसी बीच सत्यवती की माता ने सोचा कि उसकी पुत्री के लिए तैयार की गई चरु अवश्य ही श्रेष्ठ होगी अतएव उसने अपनी पुत्री से वह चरु माँग ली। सत्यवती ने वह चरु अपनी माता को दे दी और स्वयं अपनी माता की चरु खा ली।

तात्पर्य : पति में अपनी पत्नी के लिए कुछ स्नेह होना स्वाभाविक है। अतएव सत्यवती की माता ने सोचा कि ऋषि ने सत्यवती के लिए जो चरु तैयार की है वह अवश्य ही उसकी चरु से श्रेष्ठ होगी। फलतः ऋचीक की अनुपस्थिति में माता ने सत्यवती से श्रेष्ठ चरु लेकर खा ली।

तद्विदित्वा मुनिः प्राह पत्नीं कष्टमकारषीः ।
घोरो दण्डधरः पुत्रो भ्राता ते ब्रह्मवित्तमः ॥ १० ॥

शब्दार्थ

तत्—यह तथ्य; विदित्वा—जानकर; मुनिः—मुनि ने; प्राह—कहा; पत्नीम्—अपनी पत्नी से; कष्टम्—अत्यन्त दुखद; अकारषीः—तुमने कर डाला; घोरः—भयानक; दण्ड-धरः—महापुरुष जो अन्यों को दण्ड दे सकता है; पुत्रः—ऐसा पुत्र; भ्राता—भाई; ते—तुम्हारा; ब्रह्म-वित्तमः—अध्यात्म विद्या में पंडित।

जब ऋषि ऋचीक स्नान करके घर लौटे और उन्हें यह पता लगा कि उनकी अनुपस्थिति में क्या घटना घटी है तो उन्होंने अपनी पत्नी सत्यवती से कहा, ''तुमने बहुत बड़ी भूल की है। तुम्हारा पुत्र घोर क्षत्रिय होगा, जो हर एक को दण्ड दे सकेगा और तुम्हारा भाई अध्यात्म विद्या का पण्डित होगा।''

तात्पर्य : वही ब्राह्मण योग्य कहलाता है जो अपनी इन्द्रियों तथा मन को वश में रख सकता हो, जो अध्यात्म विद्या का पण्डित हो और जो सहिष्णु तथा क्षमावान हो। किन्तु क्षत्रिय वही योग्य है जो अपराधियों को कड़ा से कड़ा दण्ड दे। *भगवद्गीता* (१८.४२-४३) में इन गुणों का उल्लेख है। चूँकि सत्यवती ने अपनी चरु न खाकर अपनी माता की चरु खा ली थी अतएव उससे जो पुत्र होगा वह क्षत्रिय

गुणों से सम्पन्न होगा। यह अवांछनीय था। सामान्यतया ब्राह्मण का पुत्र ब्राह्मण के गुणों वाला होना चाहिए, किन्तु यदि वह क्षत्रिय की भाँति खूँख्वार हो जाय तो उसका नामकरण *भगवद्गीता* में वर्णित चारों वर्णों के अनुसार होगा (*चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्म विभागशः*)। यदि ब्राह्मण का पुत्र ब्राह्मण-जैसा आचरण नहीं करता तो उसे उसकी योग्यता के अनुसार क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र कहा जायेगा। समाज को विभाजित करने का मूल सिद्धान्त मनुष्य का जन्म नहीं अपितु उसके गुण तथा कर्म हैं।

प्रसादितः सत्यवत्या मैवं भूरिति भार्गवः ।
अथ तर्हि भवेत्पौत्रो जमदग्निस्ततोऽभवत् ॥ ११ ॥

शब्दार्थ

प्रसादितः—शान्त किया गया; सत्यवत्या—सत्यवती द्वारा; मा—नहीं; एवम्—इस प्रकार; भूः—हो; इति—इस प्रकार; भार्गवः—ऋषि; अथ—यदि तुम्हारा पुत्र ऐसा न हुआ; तर्हि—तो; भवेत्—होगा; पौत्रः—पोता; जमदग्निः—जमदग्नि; ततः—तत्पश्चात्; अभवत्—उत्पन्न हुआ।

किन्तु सत्यवती ने मधुर वचनों से ऋचीक मुनि को शान्त किया और प्रार्थना की कि उसका पुत्र क्षत्रिय की तरह भयंकर न हो। ऋचीक मुनि ने उत्तर दिया, ''तो तुम्हारा पौत्र क्षत्रिय गुणवाला होगा।'' इस प्रकार सत्यवती के पुत्र रूप में जमदग्नि का जन्म हुआ।

तात्पर्य : ऋषि ऋचीक अत्यधिक कुपित थे, किन्तु सत्यवती ने उन्हें किसी तरह मनाया और उसकी प्रार्थना पर उन्होंने अपना विचार बदल लिया। यहाँ इसका संकेत है कि जमदग्नि के पुत्र रूप में परशुराम का जन्म होगा।

सा चाभूत्सुमहत्पुण्या कौशिकी लोकपावनी ।
रेणोः सुतां रेणुकां वै जमदग्निरुवाह याम् ॥ १२ ॥
तस्यां वै भार्गवऋषेः सुता वसुमदादयः ।
यवीयाञ्जज्ञ एतेषां राम इत्यभिविश्रुतः ॥ १३ ॥

शब्दार्थ

सा—वह (सत्यवती); च—भी; अभूत्—हो गई; सुमहत्-पुण्या—अत्यन्त महान् एवं पवित्र; कौशिकी—कौशिकी नामक नदी; लोक-पावनी—समस्त संसार को पवित्र करने वाली; रेणोः—रेणु की; सुताम्—कन्या; रेणुकाम्—रेणुका को; वै—निस्सन्देह; जमदग्निः—सत्यवती-पुत्र जमदग्नि ने; उवाह—विवाह कर लिया; याम्—जिससे; तस्याम्—रेणुका के गर्भ से; वै—निस्सन्देह; भार्गव-ऋषेः—जमदग्नि मुनि के वीर्य से; सुताः—कई पुत्र; वसुमत्-आदयः—वसुमान इत्यादि; यवीयान्—सबसे छोटा; जज्ञे—उत्पन्न हुआ; एतेषाम्—उनमें से; रामः—परशुराम; इति—इस प्रकार; अभिविश्रुतः—विश्वविख्यात।

बाद में सत्यवती समस्त संसार को पवित्र करने वाली कौशिकी नामक पुण्य नदी बन गई और

उसके पुत्र जमदग्नि ने रेणु की पुत्री रेणुका से विवाह किया। जमदग्नि के वीर्य से रेणुका की कुक्षि से वसुमान इत्यादि कई पुत्र हुए जिनमें से राम या परशुराम सबसे छोटा था।

यमाहुर्वासुदेवांशं हैहयानां कुलान्तकम् ।
त्रिःसप्तकृत्वो य इमां चक्रे निःक्षत्रियां महीम् ॥ १४॥

शब्दार्थ

यम्—जिसको; आहुः—सारे विद्वान कहते हैं; वासुदेव-अंशम्—भगवान् वासुदेव का अवतार; हैहयानाम्—हैहयों के; कुल-अन्तकम्—कुल का विनाशकर्ता; त्रिः-सप्त-कृत्वः—इक्कीस बार; यः—जिसने (परशुराम); इमाम्—इस; चक्रे—बनाया; निःक्षत्रियाम्—क्षत्रियविहीन; महीम्—पृथ्वी को।.

विद्वान लोग इस परशुराम को भगवान् वासुदेव का विख्यात अवतार मानते हैं जिसने कार्तवीर्य के वंश का विनाश किया। परशुराम ने पृथ्वी के सभी क्षत्रियों का इक्कीस बार वध किया।

दृप्तं क्षत्रं भुवो भारमब्रह्मण्यमनीनशत् ।
रजस्तमोवृतमहन्फल्गुन्यपि कृतेऽंहसि ॥ १५॥

शब्दार्थ

दृप्तम्—अत्यन्त गर्वित; क्षत्रम्—क्षत्रियों को; भुवः—पृथ्वी के; भारम्—भार को; अब्रह्मण्यम्—पापी, ब्राह्मणों के बनाये धार्मिक नियमों की परवाह न करने वाले; अनीनशत्—निकाल दिया या विनष्ट कर दिया; रजः-तमः—रजो तथा तमो गुणों से; वृतम्—ढके हुए; अहन्—मार डाला; फल्गुनि—बहुत बड़े नहीं; अपि—यद्यपि; कृते—किया गया; अंहसि—अपराध।.

जब राजवंश रजो तथा तमो गुणों के कारण अत्यधिक गर्वित होकर अधार्मिक बन गया और ब्राह्मणों द्वारा बनाये गये नियमों की परवाह न करने लगा तो परशुराम ने उन सबको मार डाला। यद्यपि उनके अपराध बहुत बड़े न थे, किन्तु धरती का भार कम करने के लिए उन्होंने उन्हें मार डाला।

तात्पर्य : क्षत्रियों या शासक वर्ग को महान् ब्राह्मणों तथा साधु पुरुषों द्वारा बनाये गये विधि-विधानों के अनुसार संसार पर शासन करना चाहिए। ज्यों ही शासक वर्ग धार्मिक नियमों की अवहेलना करने लगता है त्योंही वह पृथ्वी के लिए भार बन जाता है। जैसा कि यहाँ पर कहा गया है—*रजस्तमोवृतं, भारम् अब्रह्मण्यम्*—जब शासक वर्ग रजो तथा तमो गुणों से प्रभावित हो जाता है तो वह विश्व के लिए भार बन जाता है और तब उसे महती शक्ति द्वारा विनष्ट किया जाना चाहिए। हम आधुनिक इतिहास में स्पष्ट देखते हैं कि राजतंत्रों को विभिन्न क्रान्तियों ने विनष्ट किया है, किन्तु दुर्भाग्यवश राजतंत्रों के विनाश के बाद तृतीय

तथा चतुर्थ श्रेणी के व्यक्तियों का प्रभुत्व स्थापित हो गया है। यद्यपि राजतंत्रों को रजो तथा तमो गुणों ने परास्त कर दिया है और विश्व से उनका लोप हो गया है, किन्तु विश्व के वासी अब भी दुखी हैं क्योंकि यद्यपि इन राजाओं के गुण तमोगुण के कारण क्षीण हो गए थे, इनका स्थान व्यापारी तथा श्रमिक वर्ग के लोगों ने ले लिया है जो और भी गिरे हुए हैं। जब सरकार का मार्गदर्शन ब्राह्मण या ईश्वरभक्त लोग करते हैं तभी लोग वास्तव में सुखी रह सकते हैं। अतएव प्राचीन काल में जब शासक वर्ग रजो तथा तमो गुणों के स्तर पर पतित हो गया तो परशुराम जैसे क्षत्रियतुल्य ब्राह्मणों ने उनका इक्कीस बार वध किया।

जैसा कि *श्रीमद्भागवत* में (१२.२.१३) कहा गया है कलियुग में—*दस्यु प्रायेषु राजसु*—शासक वर्ग (राजन्य) लुटेरों (दुस्युओं) की तरह होगा क्योंकि सरकारी राजकाज में तृतीय तथा चतुर्थ श्रेणी के लोगों का प्राधान्य हो जायेगा। वे धार्मिक नियमों तथा ब्राह्मणों के द्वारा निर्मित विधि-विधानों की अवहेलना करते हुए नागरिकों की सम्पत्ति को मनमाना ढंग से लूटने का प्रयास करेंगे। जैसा कि *श्रीमद्भागवत* में (१२.१.४०) अन्यत्र आया है—

असंस्कृताः क्रियाहीना रजसा तमसावृताः।

प्रजास्ते भक्षयिष्यन्ति म्लेच्छा राजन्यरूपिणः॥

अशुद्ध होने, मानव कर्तव्यों को ठीक से न करने एवं रजो तथा तमो गुणों से प्रभावित होने के कारण, अशुद्ध लोग (म्लेच्छ) सरकारी कर्मचारी बनकर (*राजन्यरूपिणः*) नागरिकों को निगल जायेंगे (*प्रजास्ते भक्षयिष्यन्ति*)। एक अन्य स्थान पर भी *श्रीमद्भागवत* में (१२.२.७-८) कहा गया है—

एवं प्रजाभिर्दुष्टाभिराकीर्णे क्षितिमण्डले।

ब्रह्मविट्क्षत्रशूद्राणां यो बली भविता नृपः॥

प्रजा हि लुब्धै राजन्यैर्निघृणैर्दस्युधर्मभिः।

आच्छिन्नदारद्रविणा यास्यन्ति गिरिकाननम्॥

जैसा कि *भगवद्गीता* में बतलाया गया है मानव समाज चार विभागों में बँटा है (*चातुर्वण्यं मया सृष्टम् गुणकर्म विभागशः*), किन्तु यदि इस तंत्र की अवहेलना की जाती है और समाज के गुण एवं विभागों पर ध्यान नहीं दिया जाता तो इसका परिणाम होगा—*ब्रह्म विट्क्षत्रशूद्राणां यो बली भविता नृपः*—अर्थात्

ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र की तथाकथित जाति-प्रथा निरर्थक होगी। फलस्वरूप जो भी येनकेन प्रकारेण शक्तिशाली होगा वही राजा या राष्ट्रपति बन जायेगा और इस प्रकार प्रजा को इतना सताया जायेगा कि लोग घरबार छोड़कर जंगल चले जायेगे (*यास्यन्ति गिरिकाननम्*) जिससे वे उन सरकारी अफसरों के उत्पीड़न से बच सकें जो निर्दय एवं लुटेरों-जैसी वृत्ति के हैं। इसलिए प्रजा को कृष्णभावनामृत आन्दोलन या हरे कृष्ण आन्दोलन को ग्रहण करना चाहिए क्योंकि यह भगवान् का शब्द अवतार है। *कलि-काले नाम-रूपे कृष्ण-अवतार*—अब अपने पवित्र नाम के अवतार रूप में कृष्ण प्रकट हुए हैं। अतएव जब प्रजा कृष्णभावनाभावित हो जायेगी तभी वह अच्छी सरकार, अच्छा समाज, पूर्ण जीवन तथा भवबन्धन से मुक्ति की आशा रख सकती है।

श्रीराजोवाच
किं तदंहो भगवतो राजन्यैरजितात्मभिः ।
कृतं येन कुलं नष्टं क्षत्रियाणामभीक्ष्णशः ॥ १६ ॥

शब्दार्थ

श्री-राजा उवाच—महाराज परीक्षित ने पूछा; किम्—क्या; तत् अंहः—वह अपराध; भगवतः—भगवान् के प्रति; राजन्यैः—राज परिवार द्वारा; अजित-आत्मभिः—जो अपनी इन्द्रियों को वश में न कर सकने के कारण पतित हो गये; कृतम्—किया गया; येन—जिससे; कुलम्—कुल; नष्टम्—नष्ट हो गया; क्षत्रियाणाम्—राजवंश का; अभीक्ष्णशः—पुनः पुनः।

राजा परीक्षित ने शुकदेव गोस्वामी से पूछा: अपनी इन्द्रियों को वश में न रख सकने वाले राजाओं का वह कौन सा अपराध था जिसके कारण भगवान् के अवतार परशुराम ने क्षत्रियवंश का बारम्बार विनाश किया?

श्रीबादरायणिरुवाच
हैहयानामधिपतिरर्जुनः क्षत्रियर्षभः ।
दत्तं नारायणांशांशमाराध्य परिकर्मभिः ॥ १७ ॥
बाहून्दशशतं लेभे दुर्धर्षत्वमरातिषु ।
अव्याहतेन्द्रियौजः श्रीतेजोवीर्ययशोबलम् ॥ १८ ॥
योगेश्वरत्वमैश्वर्यं गुणा यत्राणिमादयः ।
चचाराव्याहतगतिर्लोकेषु पवनो यथा ॥ १९ ॥

शब्दार्थ

श्री-बादरायणिः उवाच—श्री शुकदेव गोस्वामी ने उत्तर दिया; हैहयानाम् अधिपतिः—हैहयों का राजा; अर्जुनः—कार्तवीर्यार्जुन; क्षत्रिय-ऋषभः—क्षत्रियों में सर्वश्रेष्ठ; दत्तम्—दत्तात्रेय को; नारायण-अंश-अंशम्—नारायण के अंशांश को; आराध्य—पूजा करके;

परिकर्मभि:—विधि-विधान के अनुसार पूजा द्वारा; बाहून्—बाँहें; दश-शतम्—एक हजार (दस सौ); लेभे—प्राप्त कीं; दुर्धर्षत्वम्—कठिनाई से जीते जाने का गुण; अरातिषु—शत्रुओं के मध्य; अव्याहत—अपराजेय; इन्द्रिय-ओज:—इन्द्रियों की शक्ति; श्री—सौन्दर्य; तेज:—प्रताप प्रभाव; वीर्य—शक्ति; यश:—यश; बलम्—शारीरिक बल; योग-ईश्वरत्वम्—योगशक्ति के द्वारा अर्जित ईश्वरत्व; ऐश्वर्यम्—ऐश्वर्य; गुणा:—गुण; यत्र—जहाँ; अणिमा-आदय:—आठ सिद्धियाँ (अणिमा, लघिमा इत्यादि).); चचार—गया; अव्याहत-गति:—जिसकी प्रगति न थकने वाली थी; लोकेषु—सारे विश्व में; पवन:—वायु; यथा—के समान।.

शुकदेव गोस्वामी ने कहा : क्षत्रियश्रेष्ठ हैहयराज कार्तवीर्यार्जुन ने भगवान् नारायण के स्वांश दत्तात्रेय की पूजा करके एक हजार भुजाएँ प्राप्त कीं। वह शत्रुओं द्वारा अपराजेय बन गया और उसे अव्याहत इन्द्रिय शक्ति, सौन्दर्य, प्रभाव, बल, यश तथा अणिमा, लघिमा जैसी आठ योग सिद्धियाँ प्राप्त करने की योग शक्ति मिल गई। इस तरह पूर्ण ऐश्वर्यशाली बनकर वह सारे संसार में वायु की तरह बेजोड़ बनकर घूमने लगा।

स्त्रीरत्नैरावृत: क्रीडन्नेवाम्भसि मदोत्कट: ।
वैजयन्तीं स्रजं बिभ्रद्रुरोध सरितं भुजै: ॥ २० ॥

शब्दार्थ

स्त्री-रत्नै:—सुन्दर स्त्रियों द्वारा; आवृत:—घिरा हुआ; क्रीडन्—भोगरत; रेवा-अम्भसि—रेवा या नर्मदा नदी के जल में; मद-उत्कट:—ऐश्वर्य से अत्यन्त गर्वित होकर; वैजयन्तीम् स्रजम्—विजय की माला से; बिभ्रत्—सुशोभित; रुरोध—प्रवाह को रोक दिया; सरितम्—नदी के; भुजै:—अपनी भुजाओं से।.

एक बार नर्मदा नदी के जल में क्रीड़ा करते हुए सुन्दरी स्त्रियों से घिरे एवं विजय की माला धारण किये हुए गर्वोन्नत कार्तवीर्यार्जुन ने अपनी बाँहों से जल के प्रवाह को रोक दिया।

विप्लावितं स्वशिबिरं प्रतिस्रोत:सरिज्जलै: ।
नामृष्यत्तस्य तद्वीर्यं वीरमानी दशानन: ॥ २१ ॥

शब्दार्थ

विप्लावितम्—जलमग्न करके; स्व-शिबिरम्—अपने ही खेमे को; प्रतिस्रोत:—विपरीत दिशा में बहने वाले; सरित्-जलै:—नदी के जल से; न—नहीं; अमृष्यत्—सहन कर सका; तस्य—कार्तवीर्यार्जुन का; तत् वीर्यम्—वह प्रभाव; वीरमानी—अपने को वीर मानने वाला; दश-आनन:—दस शिरों वाला रावण।.

चूँकि कार्तवीर्यार्जुन ने जलप्रवाह की दिशा पलट दी थी अत: नर्मदा नदी के तट पर महिष्मती नगर के निकट रावण का लगा खेमा जलमग्न हो गया। यह दससिरों वाले रावण के लिए असह्य हो उठा क्योंकि वह अपने को महान् वीर मानता था और वह कार्तवीर्यार्जुन के बल को सहन नहीं कर सका।

तात्पर्य : रावण दिग्विजय प्राप्त करने के उद्देश्य से भ्रमण कर रहा था और नर्मदा नदी के तट पर

माहिष्मती नगर के निकट खेमा डाले हुए था।

गृहीतो लीलया स्त्रीणां समक्षं कृतकिल्बिषः ।
माहिष्मत्यां सन्निरुद्धो मुक्तो येन कपिर्यथा ॥ २२॥

शब्दार्थ

गृहीतः—बलपूर्वक बन्दी बनाया गया; लीलया—आसानी से; स्त्रीणाम्—स्त्रियों की; समक्षम्—उपस्थिति में; कृत-किल्बिषः—अपराधी होने के कारण; माहिष्मत्याम्—माहिष्मती नामक नगर में; सन्निरुद्धः—बन्दी बनाया गया; मुक्तः—छोड़ा गया; येन—जिसके (कार्तवीर्यार्जुन के) द्वारा; कपिः यथा—जिस प्रकार बन्दर छोड़ दिया जाय।.

जब रावण ने स्त्रियों के समक्ष कार्तवीर्यार्जुन का अपमान करना चाहा और उसे नाराज कर दिया तो उसने रावण को खेल-खेल में उसी प्रकार बन्दी बनाकर माहिष्मती नगर के कारागार में डाल दिया जिस प्रकार कोई बन्दर को पकड़ ले। बाद में उसने परवाह किए बिना उसे मुक्त कर दिया।

स एकदा तु मृगयां विचरन्विजने वने ।
यदृच्छयाश्रमपदं जमदग्नेरुपाविशत् ॥ २३॥

शब्दार्थ

सः—वह, कार्तवीर्यार्जुन; एकदा—एक बार; तु—लेकिन; मृगयाम्—शिकार करते हुए; विचरन्—घूमते हुए; विजने—एकान्त; वने—वन में; यदृच्छया—किसी कार्यक्रम के बिना; आश्रम-पदम्—रिहायशी स्थान में; जमदग्नेः—जमदग्नि मुनि के; उपाविशत्—घुस गया।.

एक बार जब कार्तवीर्यार्जुन बिना किसी कार्यक्रम के एकान्त जंगल में घूमकर शिकार कर रहा था तो वह जमदग्नि के निवास के निकट पहुँचा।

तात्पर्य : कार्तवीर्यार्जुन को जमदग्नि के आवास तक जाने का कोई कारण न था, किन्तु अपनी अद्वितीय शक्ति से गर्वित होकर वह वहाँ गया और उसने परशुराम का अपमान किया। परशुराम द्वारा उसके मारे जाने की यही पूर्वपीठिका थी।

तस्मै स नरदेवाय मुनिरर्हणमाहरत् ।
ससैन्यामात्यवाहाय हविष्मत्या तपोधनः ॥ २४॥

शब्दार्थ

तस्मै—उस; सः—उस (जमदग्नि); नरदेवाय—राजा कार्तवीर्यार्जुन को; मुनिः—मुनि ने; अर्हणम्—पूजा की सामग्री; आहरत्—प्रदान की; स-सैन्य—सेना समेत उसको; अमात्य—उसके मंत्रियों को; वाहाय—तथा रथों, हाथियों, घोड़ों या पालकी वाहकों को; हविष्मत्या—कामधेनु रखने के कारण; तपः-धनः—मुनि, जिसकी तपस्या ही उसका धन था, अथवा जो तपस्या में लगा था।.

जंगल में कठिन तपस्या में रत ऋषि जमदग्नि ने सैनिकों, मंत्रियों तथा पालकी वाहकों समेत

राजा का अच्छी तरह स्वागत किया। उन्होंने इन अतिथियों को पूजा करने की सारी सामग्री जुटाई क्योंकि उनके पास कामधेनु गाय थी जो हर वस्तु प्रदान करने में सक्षम थी।

तात्पर्य : *ब्रह्म-संहिता* से हमें जानकारी मिलती है कि वैकुण्ठ लोक, विशेष रूप से कृष्ण का निवासस्थल गोलोक वृन्दावन सुरभि गायों से पूर्ण है (*सुरभीरभिपालयन्तम्*)। सुरभि गाय को कामधेनु भी कहते हैं। यद्यपि जमदग्नि के पास एक ही कामधेनु थी, किन्तु वे उससे कोई भी इच्छित वस्तु प्राप्त कर सकते थे। इस तरह वे राजा के अनेक अनुचरों, मंत्रियों, सैनिकों, पशुओं तथा कहारों समेत राजा का स्वागत कर सके। जब हम राजा की बात करते हैं तो इसका अर्थ होता है कि उसके साथ अनेक अनुचर होंगे। जमदग्नि उस सबों का ठीक से स्वागत कर सके और उन्हें घी में बना पेट भर कर भोजन खिला सके। राजा आश्चर्यचकित था कि जमदग्नि केवल एक गाय के होने से ही कितना ऐश्वर्यशाली है अतएव उसे इस ऋषि से ईर्ष्या होने लगी। उसके अपराध की यही शुरुआत है। भगवान् के अवतार परशुराम ने कार्तवीर्यार्जुन को मार डाला क्योंकि वह अत्यधिक घमंडी था। इस भौतिक जगत में किसी के पास कितना ही धन क्यों न हो, किन्तु यदि वह गर्वित होकर मनमाना कार्य करता है तो भगवान् उसे दण्ड देते हैं। इस कथा से यही शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए, जिसमें परशुराम ने कार्तवीर्यार्जुन पर क्रुद्ध होकर उसे मार डाला और फिर २१ बार सारे संसार को क्षत्रियविहीन कर दिया।

स वै रत्नं तु तद्दृष्ट्वा आत्मैश्वर्यातिशायनम् ।
तन्नाद्रियताग्निहोत्र्यां साभिलाषः सहैहयः ॥ २५ ॥

शब्दार्थ

सः—वह (कार्तवीर्यार्जुन); वै—निस्सन्देह; रत्नम्—सम्पत्ति के स्रोत को; तु—निस्सन्देह; तत्—जमदग्नि की कामधेनु; दृष्ट्वा—देखकर; आत्म-ऐश्वर्य—निजी ऐश्वर्य; अति-शायनम्—अतिशय; तत्—वह; न—नहीं; आद्रियत—अत्यधिक प्रशंसा की; अग्निहोत्र्याम्—उस गाय में जो अग्निहोत्र यज्ञ करने के लिए अत्यन्त लाभदायक थी; स-अभिलाषः—इच्छुक; स-हैहयः—हैहयवंशी, अपने व्यक्तियों सहित।.

कार्तवीर्यार्जुन ने सोचा कि जमदग्नि उसकी तुलना में अधिक शक्तिशाली एवं सम्पन्न है क्योंकि उसके पास कामधेनु रूपी रत्न है अतएव उसने तथा उसके हैहयजनों ने जमदग्नि के सत्कार की अधिक प्रशंसा नहीं की। उल्टे, वे उस कामधेनु को लेना चाहते थे जो अग्निहोत्र यज्ञ के लिए लाभदायक थी।

तात्पर्य : जमदग्नि कार्तवीर्यार्जुन की अपेक्षा अधिक शक्तिशाली थे क्योंकि वे कामधेनु से प्राप्त घी से अग्निहोत्र यज्ञ करते थे। ऐसी गाय हर किसी के पास होनी सम्भव नहीं। तो भी एक सामान्य व्यक्ति एक सामान्य गाय रखकर उसकी रक्षा करते हुए उससे प्रचुर दूध प्राप्त कर सकता है जिससे वह अग्निहोत्र यज्ञ के लिए घी बना सकता है। यह हर एक के लिए सम्भव है। इस तरह हम देखते हैं कि *भगवद्गीता* में कृष्ण *गोरक्ष्य* अर्थात् गोरक्षा का उपदेश देते हैं। यह अत्यावश्यक है क्योंकि यदि गायों की ठीक से देखभाल की जाय तो उनसे प्रचुर दूध मिल सकता है। हमें अमरीका में इसका व्यावहारिक अनुभव हुआ है जहाँ हम इस्कॉन के विविध फार्मों में गायों को ठीक से सुरक्षा प्रदान करके पर्याप्त दूध प्राप्त कर रहे हैं। अन्य फार्मों की गाएँ उतना दूध नहीं देतीं जितना कि हमारी गाएँ देती हैं। क्योंकि हमारी गाएँ जानती हैं कि हम उनका वध नहीं करेंगे अतएव वे सुखी हैं और पर्याप्त दूध देती हैं। अतएव कृष्ण जी द्वारा दिया गया गोरक्ष्य का उपदेश अत्यन्त सार्थक है। सारे विश्व को कृष्ण से शिक्षा ग्रहण करनी चाहिए कि किस प्रकार मात्र अन्न उत्पादन करके (*अन्नाद् भवन्ति भूतानि*) तथा गायों को सुरक्षा प्रदान करके (*गोरक्ष्य*) लोग बिना किसी अभाव के सुखपूर्वक रह सकते हैं। *कृषि-गोरक्ष्य-वाणिज्यं वैश्य कर्म स्वभावजम्।* मानव समाज के तृतीय श्रेणी के लोगों अर्थात् व्यापारी वर्ग को अन्नोत्पादन तथा गायों की रक्षा के लिए भूमि अवश्य रखनी चाहिए। यह *भगवद्गीता* का आदेश है। गायों की सुरक्षा के प्रश्न पर मांसाहारियों को आपत्ति होगी; अतएव इसके जवाब में हमें उनसे कहना चाहिए कि चूँकि कृष्ण गोरक्षा पर बल देते हैं अतएव जो मांस खाना ही चाहते हैं वे कूकरों-सूकरों, भेड़-बकरियों का मांस खायें, किन्तु वे गायों के जीवन पर आँच न आने दें क्योंकि यह मानव समाज की आध्यात्मिक प्रगति को विनष्ट करने वाला है।

हविर्धानीमृषेर्दर्पान्नरान्हर्तुमचोदयत् ।
ते च माहिष्मतीं निन्युः सवत्सां क्रन्दतीं बलात् ॥ २६ ॥

शब्दार्थ

हविः-धानीम्—कामधेनु को; ऋषेः—ऋषि जमदग्नि की; दर्पात्—भौतिक शक्ति से गर्वित होने से; नरान्—अपने सारे आदमियों (सैनिकों) को; हर्तुम्—चुरा या ले जाने के लिए; अचोदयत्—प्रोत्साहित किया; ते—वे; च—भी; माहिष्मतीम्—कार्तवीर्यार्जुन की राजधानी में; निन्युः—ले आये; स-वत्साम्—उसके बछड़े समेत; क्रन्दतीम्—रोती हुई को; बलात्—बलपूर्वक, जबरन।.

भौतिक शक्ति से गर्वित कार्तवीर्यार्जुन ने अपने व्यक्तियों को जमदग्नि की कामधेनु चुरा लेने के लिए प्रेरित किया। फलतः वे व्यक्ति रोती-विलपती कामधेनु को उसके बछड़े समेत बलपूर्वक

कार्तवीर्यार्जुन की राजधानी माहिष्मती ले आये।

तात्पर्य : इस श्लोक में *हविर्धानीम्* शब्द महत्त्वपूर्ण है। इसका अर्थ है यज्ञ के अनुष्ठानों को सम्पन्न करने के लिए हवि या घी प्रदान करने वाली गाय। मनुष्य को इस जीवन में यज्ञ सम्पन्न करने की शिक्षा दी जानी चाहिए। जैसा कि हमें *भगवद्गीता* से (३.९) जानकारी मिलती है— *यज्ञार्थात् कर्मणोऽन्यत्र लोकोऽयं कर्मबन्धनः*—यदि हम यज्ञ नहीं करते तो हम इन्द्रियतृप्ति के लिए कूकरों-सूकरों की तरह कठिन श्रम करते रहेंगे। यह सभ्यता नहीं है। मनुष्य को यज्ञ करने की शिक्षा दी जानी चाहिए। *यज्ञाद् भवति पर्जन्यः*। यदि यज्ञ नियमित रूप से सम्पन्न होते रहें तो समुचित वर्षा होती रहेगी और ठीक से वर्षा होने पर भूमि उपजाऊ होगी तथा जीवन की समस्त आवश्यकताओं को पूरा कर सकेगी। अतएव यज्ञ आवश्यक है। यज्ञ के लिए घी चाहिए और घी के लिए गाय की सुरक्षा होनी चाहिए।इसलिए यदि हम वैदिक सभ्यता की उपेक्षा करेंगे तो हमें अवश्य ही कष्ट मिलेगा। तथाकथित विद्वान तथा दार्शनिक जीवन में सफलता के रहस्य को नहीं जानते अतएव उन्हें प्रकृति के हाथों में पड़कर कष्ट सहना पड़ता है (*प्रकृतेः क्रियमाणानि गुणै कर्माणि सर्वशः*)।कष्ट सहन करने पर विवश होने पर भी वे सोचते हैं कि वे सभ्यता में आगे बढ़ रहे हैं (*अहंकार विमूढात्मा कर्ताहमिति मन्यते*)। अतएव कृष्णभावनामृत आन्दोलन उस सभ्यता को पुनर्जीवित करने के लिए है जिसमें हर व्यक्ति सुखी रह सके। हमारे कृष्णभावनामृत आन्दोलन का यही उद्देश्य है। *यज्ञे सुखेन भवन्तु।*

अथ राजनि निर्याते राम आश्रम आगतः ।
श्रुत्वा तत्तस्य दौरात्म्यं चुक्रोधाहिरिवाहतः ॥ २७॥

शब्दार्थ

अथ—तत्पश्चात्; राजनि—राजा के; निर्याते—चले जाने पर; रामः—जमदग्नि का सबसे छोटा पुत्र परशुराम; आश्रमे—आश्रम में; आगतः—वापस आया; श्रुत्वा—सुनकर; तत्—जो; तस्य—कार्तवीर्यार्जुन का; दौरात्म्यम्—दुष्कर्म; चुक्रोध—अत्यन्त क्रुद्ध हुआ; अहिः—साँप; इव—सदृश; आहतः—कुचले जाने पर या चोट खाने पर।

जब कामधेनु सहित कार्तवीर्यार्जुन चला गया तो जमदग्नि का सबसे छोटा पुत्र परशुराम आश्रम में लौटा। जब उसने कार्तवीर्यार्जुन के दुष्कर्म के विषय में सुना तो वह कुचले हुए साँप की तरह क्रुद्ध हो उठा।

घोरमादाय परशुं सतूणं वर्म कार्मुकम् ।
अन्वधावत दुर्मर्षो मृगेन्द्र इव यूथपम् ॥ २८ ॥

शब्दार्थ

घोरम्—अत्यन्त भयानक; आदाय—हाथ में लेकर; परशुम्—फरसा; स-तूणम्—तूणीर सहित; वर्म—ढाल; कार्मुकम्—धनुष; अन्वधावत—पीछा किया; दुर्मर्षः—अत्यधिक क्रोध में भरे परशुराम ने; मृगेन्द्रः—सिंह; इव—सदृश; यूथपम्—हाथी पर (आक्रमण करने के लिए)।

अपना भयानक फरसा, ढाल, धनुष तथा तरकस लेकर अत्यधिक क्रुद्ध परशुराम ने कार्तवीर्यार्जुन का पीछा किया जिस तरह सिंह हाथी का पीछा करता है।

तमापतन्तं भृगुवर्यमोजसा
धनुर्धरं बाणपरश्वधायुधम् ।
ऐणेयचर्माम्बरमर्कधामभि-
र्युतं जटाभिर्ददृशे पुरीं विशन् ॥ २९ ॥

शब्दार्थ

तम्—उस; आपतन्तम्—पीछा करते; भृगु-वर्यम्—भृगुवंशी भगवान् परशुराम को; ओजसा—अत्यन्त दारुण; धनुः-धरम्—धनुष धारण किये; बाण—बाण; परश्वध—फरसा; आयुधम्—इन सारे हथियारों को; ऐणेय-चर्म—श्याम हिरन की खाल; अम्बरम्—अपने शरीर को ढके; अर्क-धामभिः—सूर्यप्रकाश की भाँति प्रकट होकर; युतम् जटाभिः—जटाओं से युक्त; ददृशे—उसने देखा; पुरीम्—राजधानी में; विशन्—प्रवेश करते हुए।

अभी राजा कार्तवीर्यार्जुन अपनी राजधानी माहिष्मती पुरी में प्रवेश कर ही रहा था कि उसने भृगुवंशियों में श्रेष्ठ भगवान् परशुराम को फरसा, ढाल, धनुष तथा बाण लिए अपना पीछा करते देखा। परशुरामजी ने काले हिरन की खाल पहन रखी थी और उनका जटाजूट सूर्य के तेज जैसा प्रतीत हो रहा था।

अचोदयद्धस्तिरथाश्वपत्तिभि-
र्गदासिबाणर्ष्टिशतघ्निशक्तिभिः ।
अक्षौहिणीः सप्तदशातिभीषणा-
स्ता राम एको भगवानसूदयत् ॥ ३० ॥

शब्दार्थ

अचोदयत्—लड़ने के लिए भेजा; हस्ति—हाथी; रथ—रथ; अश्व—घोड़े; पत्तिभिः—पैदल सेना समेत; गदा—गदा; असि—तलवार; बाण—बाण; ऋष्टि—ऋष्टि नामक औजार; शतघ्नि—शतघ्नि नामक हथियार; शक्तिभिः—तथा शक्ति नामक हथियार से; अक्षौहिणीः—अक्षौहिणी; सप्त-दश—सत्रह; अति-भीषणाः—अत्यन्त भयानक; ताः—उन सबों को; रामः—परशुराम ने; एकः—अकेले; भगवान्—भगवान्; असूदयत्—मार डाला।

परशुराम को देखते ही कार्तवीर्यार्जुन डर गया और उसने तुरन्त ही उनसे युद्ध करने के लिए

अनेक हाथी, रथ, घोड़े तथा पैदल सैनिक भेजे जो गदा, तलवार, बाण, ऋष्टि, शतघ्नि, शक्ति इत्यादि विविध हथियारों से युक्त थे। उसने परशुराम को रोकने के लिए पूरे सत्रह अक्षौहिणी सैनिक भेजे, किन्तु भगवान् परशुराम ने अकेले ही सबों का सफाया कर दिया।

तात्पर्य : *अक्षौहिणी* शब्द २१८७० रथ तथा इतने हाथी, १०९३५० पैदल सैनिक तथा ६५६१० घोड़ों से युक्त सैन्य व्यूह है। इसका सही-सही वर्णन *महाभारत* के आदिपर्व के द्वितीय अध्याय में दिया हुआ है—

एको रथो गजश्चैकः नराः पञ्च पदातयः।

त्रयश्च तुरगास्तज्ज्ञै पत्तिरित्यभिधीयते॥

पत्तिं तु त्रिगुणाम् एतां विदुः सेनामुखं बुधाः।

त्रीणि सेनामुखान्येको गुल्म इत्यभिधीयते॥

त्रयोगुल्मा गणो नाम वाहिनी तु गणास्त्रयः।

श्रुतास्तिस्रस्तु वाहिन्यः पृतनेति विचक्षणै॥

चमूस्तु पृतनास्तिस्रश्चंवस्तिस्रस्त्वनीकिनी।

अनीकिनीं दशगुणामाहुरक्षौहिणीं बुधाः॥

अक्षौहिण्यस्तु संख्याता रथानां द्विज सत्तमाः।

संख्यागणिततत्त्वज्ञै सहस्राण्येकविशंति॥

शतान्युपरि चाष्टौ च भूयस्तथा च सप्ततिः।

गजानां तु परीमाणं तावदेवात्र निर्दिशेत्॥

ज्ञेयं शतसहस्रं तु सहस्राणि तथा नव।

नराणामधि पञ्चाशच्छतानि त्रीणि चानघाः॥

पञ्चषष्टिसहस्राणि तथाश्वानां शतानि च।

दशोत्तराणि षट् चाहुर्यथावद् अभिसंख्यया।

एतामक्षणौहिणीं प्राहुः संख्यातत्त्वविदो जनाः॥

''ज्ञाताओं का कहना है कि एक रथ, एक हाथी, पाँच पैदल सैनिक तथा तीन घोड़े मिलकर एक पत्ति

कहलाते हैं। चतुर व्यक्ति यह भी जानते हैं कि ऐसे तीन पत्ति का एक सेनामुख होता है। तीन सेनामुख मिलकर एक गुल्म बनाते हैं, तीन गुल्म मिलकर एक गण एवं तीन गण मिलकर एक वाहिनी कहलाते हैं। विद्वान लोग तीन वाहिनियों को एक पृतना, तीन पृतनाओं को एक चमू, तीन चमुओं को एक अनीकिनी कहते हैं। ऐसी दस अनीकिनियों से एक अक्षौहिणी बनती है। हे द्विज! एक अक्षौहिणी में रथों की संख्या २१८७० होती है और हाथियों की संख्या भी इतनी ही है। पैदल सैनिकों की संख्या १०९३५० है और घोड़ों की संख्या ६५६१० है। यह एक अक्षौहिणी कहलाती है।''

यतो यतोऽसौ प्रहरत्परश्वधो
मनोऽनिलौजाः परचक्रसूदनः ।
ततस्ततश्छिन्नभुजोरुकन्धरा
निपेतुरुर्व्यां हतसूतवाहनाः ॥ ३१ ॥

शब्दार्थ

यतः—जहाँ; यतः—जहाँ; असौ—भगवान् परशुराम; प्रहरत्—प्रहार करते हुए; परश्वधः—परशु नामक हथियार चलाने में निपुण; मनः—मन की तरह; अनिल—वायु की तरह; ओजाः—शक्तिशाली; पर-चक्र—शत्रु की सैन्य शक्ति का; सूदनः—वध करने वाला; ततः—वहाँ; ततः—वहाँ; छिन्न—कटकर तितर-बितर; भुज—बाहें; ऊरु—पाँव; कन्धराः—धड़; निपेतुः—गिर पड़े; उर्व्याम्—पृथ्वी पर; हत—मारे हुए; सूत—सारथी; वाहनाः—घोड़े तथा हाथी की सवारियाँ।

शत्रु की सेना को मारने में कुशल भगवान् परशुराम ने मन तथा वायु की गति से काम करते हुए अपने फरसे से शत्रुओं के टुकड़े कर दिये। वे जहाँ-जहाँ गये सारे शत्रु खेत होते रहे, उनके पाँव, हाथ तथा धड़ अलग-अलग हो गये, उनके सारथी मार डाले गये और उनके वाहन, हाथी तथा घोड़े सभी विनष्ट कर दिये गये।

तात्पर्य : प्रारम्भ में जब शत्रुसेना युद्ध करने वाले सैनिकों, हाथियों तथा घोड़ों से भरी थी तो भगवान् परशुराम मन के वेग से उनके बीच उनका वध करने के लिए आगे बढ़े। जब वे कुछ थक गए तो उनकी गति वायु जैसी हो गई और फिर वे तेजी से शत्रुओं का वध करते रहे। मन का वेग वायु के वेग से अधिक है।

दृष्ट्वा स्वसैन्यं रुधिरौघकर्दमे
रणाजिरे रामकुठारसायकैः ।
विवृक्णवर्मध्वजचापविग्रहं

निपातितं हैहय आपतद्रुषा ॥ ३२ ॥

शब्दार्थ

दृष्ट्वा—देखकर; स्व-सैन्यम्—अपने सैनिकों को; रुधिर-ओघ-कर्दमे—रक्त बहने से गँदले हुए; रण-अजिरे—युद्धभूमि में; राम-कुठार—भगवान् परशुराम के फरसे से; सायकैः—बाणों से; विवृक्ण—तितर-बितर; वर्म—ढाल; ध्वज—ध्वजा; चाप—धनुष; विग्रहम्—शरीर; निपातितम्—गिरे हुए; हैहयः—कार्तवीर्यार्जुन; आपतत्—तेजी से वहाँ आया; रुषा—क्रोध से।

अपने फरसे तथा बाणों को व्यवस्थित करके परशुराम ने कार्तवीर्यार्जुन के सिपाहियों की ढालों, उनके झंडों, धनुषों तथा उनके शरीरों के टुकड़े-टुकड़े कर डाले जो युद्धभूमि में गिर गये और जिनके रक्त से भूमि पंकिल हो गई। अपनी पराजय होते देखकर अत्यन्त क्रुद्ध होकर कार्तवीर्यार्जुन युद्धभूमि की ओर लपका।

अथार्जुनः पञ्चशतेषु बाहुभिर्
धनुःषु बाणान्युगपत्स सन्दधे ।
रामाय रामोऽस्त्रभृतां समग्रणी-
स्तान्येकधन्वेषुभिराच्छिनत्समम् ॥ ३३ ॥

शब्दार्थ

अथ—तत्पश्चात्; अर्जुनः—कार्तवीर्यार्जुन; पञ्च-शतेषु—पाँच सौ; बाहुभिः—अपनी बाहुओं से; धनुःषु—धनुषों पर; बाणान्—बाणों को; युगपत्—एकसाथ; सः—उसने; सन्दधे—स्थिर किया; रामाय—परशुराम को मारने के लिए; रामः—परशुराम ने; अस्त्र-भृताम्—अस्त्र प्रयोग करने वाले सारे सैनिकों में से; समग्रणीः—सर्वप्रमुख; तानि—कार्तवीर्यार्जुन के सारे बाण; एक-धन्वा—एक धनुषधारी; इषुभिः—बाणों से; आच्छिनत्—टुकड़े कर डाले; समम्—के साथ।

तब कार्तवीर्यार्जुन ने परशुराम को मारने के लिए एक हजार भुजाओं में एकसाथ पाँच सौ धनुषों पर बाण चढ़ा लिए। किन्तु श्रेष्ठ लड़ाकू भगवान् परशुराम ने एक ही धनुष से इतने बाण छोड़े कि कार्तवीर्यार्जुन के हाथों के सारे धनुष तथा बाण तुरन्त कटकर टुकड़े-टुकड़े हो गये।

पुनः स्वहस्तैरचलान्मृधेऽङ्घ्रिपा-
नुत्क्षिप्य वेगादभिधावतो युधि ।
भुजान्कुठारेण कठोरनेमिना
चिच्छेद रामः प्रसभं त्वहेरिव ॥ ३४ ॥

शब्दार्थ

पुनः—फिर; स्व-हस्तैः—अपने हाथों से; अचलान्—पर्वतों को; मृधे—युद्धभूमि में; अङ्घ्रिपान्—वृक्षों को; उत्क्षिप्य—उखाड़ कर; वेगात्—वेग से; अभिधावतः—तेजी से दौते हुए; युधि—युद्धभूमि में; भुजान्—सारी भुजाएँ; कुठारेण—अपने फरसे से; कठोर-नेमिना—अत्यन्त तीक्ष्ण; चिच्छेद—काट डाला; रामः—परशुराम ने; प्रसभम्—अत्यन्त वेग से; तु—लेकिन; अहेः इव—सर्प के फनों की भाँति।

जब कार्तवीर्यार्जुन के बाण छिन्न-भिन्न हो गये तो उसने अपने हाथों से अनेक वृक्ष तथा पर्वत

उखाड़ लिये और वह फिर से परशुरामजी को मारने के लिए उनकी ओर तेजी से दौा। किन्तु परशुराम ने अपने फरसे से अत्यन्त वेग से कार्तवीर्यार्जुन की भुजाएँ काट लीं जिस तरह कोई सर्प के फनों को काट ले।

कृत्तबाहोः शिरस्तस्य गिरेः शृङ्गमिवाहरत् ।
हते पितरि तत्पुत्रा अयुतं दुद्रुवुर्भयात् ॥ ३५ ॥
अग्निहोत्रीमुपावर्त्य सवत्सां परवीरहा ।
समुपेत्याश्रमं पित्रे परिक्लिष्टां समर्पयत् ॥ ३६ ॥

शब्दार्थ

कृत्त-बाहोः—बाँह कटे कार्तवीर्यार्जुन का; शिरः—शिर; तस्य—उसका; गिरेः—पर्वत की; शृङ्गम्—चोटी; इव—सदृश; आहरत्—(परशुराम ने) उसके शरीर से काट लिया; हते पितरि—अपने पिता के मारे जाने पर; तत्-पुत्राः—उसके पुत्र; अयुतम्—दस हजार; दुद्रुवुः—भाग गये; भयात्—डर के मारे; अग्निहोत्रीम्—कामधेनु को; उपावर्त्य—पास लाकर; स-वत्साम्—बछडे सहित; पर-वीर-हा—शत्रुओं के वीरों को मारने वाले परशुराम; समुपेत्य—लौटकर; आश्रमम्—अपने पिता के आवास में; पित्रे—पिता को; परिक्लिष्टाम्—अत्यधिक कष्ट पाई हुई; समर्पयत्—लाकर दे दिया।

तत्पश्चात् परशुराम ने बाँह-कटे कार्तवीर्यार्जुन के सिर को पर्वतशृंग के समान काट लिया। जब कार्तवीर्यार्जुन के दस हजार पुत्रों ने अपने पिता को मारा गया देखा तो वे सब डर के मारे भाग गये। तब शत्रु का वध करके परशुराम ने कामधेनु को छुड़ाया, जिसे काफी कष्ट मिल चुका था और वे उसे बछड़े समेत अपने घर ले आये तथा उसे अपने पिता जमदग्नि को दे दिया।

स्वकर्म तत्कृतं रामः पित्रे भ्रातृभ्य एव च ।
वर्णयामास तच्छ्रुत्वा जमदग्निरभाषत ॥ ३७ ॥

शब्दार्थ

स्व-कर्म—अपना कार्य; तत्—वे सारे कर्म; कृतम्—जो किये जा चुके थे; रामः—परशुराम ने; पित्रे—अपने पिता से; भ्रातृभ्यः—अपने भाइयों से; एव च—तथा; वर्णयाम् आस—वर्णन किया; तत्—वह; श्रुत्वा—सुनकर; जमदग्निः—परशुराम के पिता ने; अभाषत—इस प्रकार कहा।

परशुराम ने कार्तवीर्यार्जुन के वध सम्बन्धी अपने कार्यकलापों का वर्णन अपने पिता तथा भाइयों से किया। इन कार्यों को सुनकर जमदग्नि अपने पुत्र से इस प्रकार बोले।

राम राम महाबाहो भवान्पापमकारषीत् ।
अवधीन्नरदेवं यत्सर्वदेवमयं वृथा ॥ ३८ ॥

शब्दार्थ

राम राम—हे प्रिय पुत्र परशुराम; महाबाहो—हे महान् वीर; भवान्—तुमने; पापम्—पापपूर्ण कृत्य; अकारषीत्—किया है; अवधीत्—मार डाला है; नरदेवम्—राजा को; यत्—जो; सर्व-देव-मयम्—सारे देवताओं के मूर्तरूप; वृथा—व्यर्थ ही।

हे वीर, हे पुत्र परशुराम, तुमने व्यर्थ ही राजा को मार डाला है क्योंकि वह सारे देवताओं का मूर्तरूप माना जाता है। इस प्रकार तुमने पाप किया है।

वयं हि ब्राह्मणास्तात क्षमयार्हणतां गताः ।
यया लोकगुरुर्देवः पारमेष्ठ्यमगात्पदम् ॥ ३९ ॥

शब्दार्थ

वयम्—हम; हि—निस्सन्देह; ब्राह्मणाः—योग्य ब्राह्मण हैं; तात—हे पुत्र; क्षमया—क्षमा के गुण से; अर्हणताम्—पूजनीय होने का पद; गताः—हमने प्राप्त किया है; यया—इस योग्यता से; लोक-गुरुः—इस ब्रह्माण्ड के गुरु; देवः—ब्रह्मा ने; पारमेष्ठ्यम्—इस संसार के भीतर परम पुरुष; अगात्—प्राप्त किया; पदम्—पद को।

हे पुत्र, हम सभी ब्राह्मण हैं और अपनी क्षमाशीलता के कारण जनसामान्य के लिए पूज्य बने हुए हैं। इस गुण के कारण ही इस ब्रह्माण्ड के परम गुरु ब्रह्माजी को उनका पद प्राप्त हुआ है।

क्षमया रोचते लक्ष्मीर्ब्राह्मी सौरी यथा प्रभा ।
क्षमिणामाशु भगवांस्तुष्यते हरिरीश्वरः ॥ ४० ॥

शब्दार्थ

क्षमया—केवल क्षमा के कारण; रोचते—रोचक बनता है; लक्ष्मीः—लक्ष्मी जी; ब्राह्मी—ब्राह्मणों के गुणों से; सौरी—सूर्यदेव; यथा—जिस तरह; प्रभा—प्रकाश; क्षमिणाम्—क्षमाशील ब्राह्मणों से; आशु—शीघ्र ही; भगवान्—भगवान्; तुष्यते—प्रसन्न हो जाते हैं; हरिः—हरि; ईश्वरः—परम नियन्ता।

ब्राह्मणों का कर्तव्य है कि वे क्षमाशीलता के गुण का संवर्धन करें क्योंकि यह सूर्य के समान तेजवान है। भगवान् हरि क्षमाशील व्यक्तियों से प्रसन्न होते हैं।

तात्पर्य : विभिन्न व्यक्ति विभिन्न गुणों के कारण सुन्दर बनते हैं। चाणक्य पंडित कहते हैं कि यद्यपि कोयल काली होती है, किन्तु अपनी मीठी वाणी के कारण सुन्दर है। इसी प्रकार स्त्री अपने सतीत्व तथा पति के प्रति आज्ञाकारिता से सुन्दर बनती है और कुरूप व्यक्ति पंडित बनने पर सुन्दर बनता है। इसी प्रकार ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य तथा शूद्र अपने-अपने गुणों के कारण सुन्दर होते हैं। ब्राह्मण तब सुन्दर बनते हैं जब वे क्षमाशील होते है, क्षत्रिय तब जब वे वीर हों और युद्ध से मुख न मोड़ें, वैश्य तब जब वे सांस्कृतिक कार्योंको समृद्ध करते हैं और गायों की रक्षा करते हैं तथा शूद्र तब जब वे अपने स्वामियों को प्रसन्न करते हुए अपने कर्तव्यों का विश्वासपूर्वक पालन करते हैं। इस तरह व्यक्ति अपने विशिष्ट गुणों से सुन्दर बन जाता

है और जैसा कि यहाँ वर्णन हुआ है, ब्राह्मण का विशिष्ट गुण क्षमाशीलता है।

राज्ञो मूर्धाभिषिक्तस्य वधो ब्रह्मवधाद्गुरुः ।
तीर्थसंसेवया चांहो जह्यङ्गाच्युतचेतनः ॥ ४१ ॥

शब्दार्थ

राज्ञः—राजा का; मूर्ध-अभिषिक्तस्य—जो सम्राट के नाम से विख्यात है; वधः—वध, हत्या; ब्रह्म-वधात्—ब्राह्मण की हत्या की अपेक्षा; गुरुः—अत्यन्त कठोर; तीर्थ-संसेवया—तीर्थस्थानों की पूजा करके; च—भी; अंहः—पापकर्म; जहि—धो डालो; अङ्ग—हे प्रिय पुत्र; अच्युत-चेतनः—पूर्णतया कृष्णभावनाभावित होकर।

हे प्रिय पुत्र, एक सम्राट का वध ब्राह्मण की हत्या से भी अधिक पापमय है। किन्तु अब यदि तुम कृष्णभावनाभावित होकर तीर्थस्थानों की पूजा करो तो इस महापाप का प्रायश्चित हो सकता है।

तात्पर्य : जो पूर्णतया भगवान् की शरण में चला जाता है वह सारे पापों से मुक्त हो जाता है (*अहं त्वां सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि*)। जिस दिन या जिस क्षण से कोई श्रीकृष्ण को आत्मसमर्पण कर देता है, तो वह कितना ही बड़ा पापी क्यों न हो मुक्त हो जाता है। फिर भी, उदाहरण के रूप में, जमदग्नि ने अपने पुत्र परशुराम को तीर्थस्थानों की पूजा करने की सलाह दी। चूँकि सामान्य व्यक्ति तुरन्त ही भगवान् को आत्मसमर्पण नहीं कर पाता अतएव उसे तीर्थस्थानों को जाने की सलाह दी जाती है जिससे वह साधु पुरुषों को खोजे और धीरे-धीरे अपने पापकर्मों के फल से मुक्त हो जाय।

इस प्रकार *श्रीमद्भागवत* के नवम स्कंध के अन्तर्गत ''भगवान् का योद्धा अवतार, परशुराम'' नामक पंद्रहवें अध्याय के भक्तिवेदान्त तात्पर्य पूर्ण हुए।